Gyanvividha, Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026 : PP-426-429

ज्ञानविविधा

कला, मानविकी और सामाजिक विज्ञान की सहकर्मी-समीक्षित, मूल्यांकित, त्रैमासिक शोध पत्रिका

ISSN : 3048-4537(Online)
3049-2327(Print)
IIFS Impact Factor-4.5
Vol.-3; Issue-1 (Jan.-March) 2026
Page No.- 426-429
©2026 Gyanvividha
https://journal.gyanvividha.com

Author's :

1. सुजाता कुमारी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, बी. आर. अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

2. डॉ. त्रिविक्रम नारायण सिंह
प्राध्यापक, हिंदी विभाग, बी. आर. अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

Corresponding Author :

सुजाता कुमारी
शोधार्थी, हिंदी विभाग, बी. आर. अम्बेडकर बिहार विश्वविद्यालय, मुजफ्फरपुर.

रेणु की प्रारंभिक कहानियाँ

फणीश्वरनाथ रेणु का जीवन और साहित्य जितना बहुआयामी है उतना ही रसग्राही। रेणु ने अपने साहित्य में तत्कालीन सामाजिक समस्याओं, कुप्रथाओं और मानवीय मूल्यों का चित्रण बहुत मार्मिक ढंग से किया है। फणीश्वरनाथ रेणु ने 1936 से कहानी लेखन की शुरुआत की थी। कई स्रोतों से ज्ञात होता है कि किशोरावस्था अर्थात् इस दौर की कहानियाँ अपरिपक्व थीं; लेकिन 1942 के आंदोलन में गिरफ्तार होने के बाद जब वे 1944 में जेल से मुक्त हुए, उसके बाद उन्होंने जो भी कहानियाँ लिखीं, वे सभी परिपक्व कहानियाँ थीं।

उनकी 'बटबाबा' नामक पहली परिपक्व कहानी थी। रेणु की दूसरी कहानी 'पहलवान की ढोलक' जो साप्ताहिक 'विश्वमित्र' में 11 दिसंबर 1944 में छपी। 1972 में रेणु ने अपनी अंतिम कहानी 'भित्तिचित्र की मयूरी' लिखी। रेणु ने अपनी पहली कहानी 'बटबाबा' में ही वह भाषा-शिल्प शैली अर्जित कर ली थी जो उनकी बाद की रचनाओं में दृष्टिगोचर होती है। मानवीय आस्था, राजनीतिक विश्वास की झलक भी उनकी शुरु की रचनाओं में दिखाई पड़ती है। राजनीतिक पार्टियों के प्रति मोहभंग की मन:स्थिति उनकी प्रारंभ में ही बन गई थी। रेणु की रचनाओं के पात्र तब तक संघर्ष का रास्ता अपनाए रखते हैं जब तक कि आम जनता सुखी-सम्पन्न नहीं हो जाती।

रेणु जी ने जीवन के अंतिम दौर में एक पंक्ति लिखी थी— 'दिव्य प्रतिवाद से हरदम यह जीवन जलता है'। यह प्रतिवाद यह संघर्ष रेणु और उनके कथा-साहित्य में इसलिए है क्योंकि वे जीवन से निश्छल अनुराग करते हैं। उनके हृदय से प्रेम छलकता रहता है और वे विभिन्न पात्रों की कथा कहते हुए उसे अपने हृदय के संस्पर्श से सींचते रहते हैं।

रेणु की कहानी का मूल धरातल केवल गाँव ही नहीं, बल्कि उस अंचल का गाँव है जो विपरीत परिस्थितियों में भी अपनी जीवन-रस को बचाए हुए है। दुःख की बात यह है कि इस समय सभ्यता जिस दिशा में जा रही है, उसमें सबसे अधिक क्षति जीवन का यह रस हुआ है।

इसी समय जीवन में समृद्धि तो आई, किंतु विषमता की खाई गहरी होते जाने से जीवन-रस सूखता चला गया है। लेकिन देश को आजादी मिलने के बाद ही जब रेणु ने कहानियाँ लिखी थीं, उस समय तक जीवन में यह रस मौजूद था। यह रस जिंदगी को ऊपरी सतह से देखने वालों की समझ में नहीं आ पाता। लेकिन रेणु ने जब अपने अंचल को देखा-समझा होगा, तब इस रहस्य को उन्होंने पकड़ने की कोशिश की। देश के ग्रामीण अंचल अपने मैलेपन के साथ जीवित कैसे बने हुए हैं? इनमें उत्पीड़न, साधनहीनता, अभाव की कमी होने के बावजूद उमंग, उत्साह कैसे बची हुई है? जिसका बाहरी क्षरण बहुत तेजी से होने पर भी आंतरिक रस नहीं सूखा। इन बातों का सवाल रेणु की कहानियों में मिलता है।

रेणु की प्रारंभिक कहानियों में 'रसप्रिया' अत्यंत महत्वपूर्ण है। उनके पहले कहानी-संग्रह 'ठुमरी' में संकलित कहानियाँ प्रारंभिक होने के बावजूद अपनी संवेदना और शिल्प के कारण उल्लेखनीय हैं। इस संदर्भ में गोपाल राय का कथन अत्यंत समीचीन है। उनकी प्रारंभिक कहानियों पर टिप्पणी करते हुए गोपाल राय ने लिखा है— "'रसप्रिया' (1955) रेणु की पहली कहानी है, जिसने उन्हें एकबारगी हिन्दी के श्रेष्ठ कहानीकारों की पंक्ति में बिठा दिया। दूसरे ही वर्ष (1956) प्रकाशित 'तीसरी कसम' ने तो कहानीकार के रूप में रेणु की अमिट पहचान भी पक्की कर दी। इसके बाद रेणु की 'लाल पान की बेगम', 'ठेस', 'तीन बिंदियाँ', 'पंचलाइट', 'सिरपंचमी का सगुन', 'तीर्थोदक', 'नित्य लीला', 'नेपथ्य का अभिनेता', 'कबाड़' (1957-60) आदि एक दर्जन से ऊपर कहानियाँ और 'ठुमरी' नामक कहानी-संग्रह (1959) प्रकाशित हुआ। जिसमें 'रसप्रिया', 'तीसरी कसम', 'लाल पान की बेगम', 'पंचलाइट', 'सिरपंचमी का सगुन', 'तीर्थोदक', 'तीन बिंदियाँ', 'ठेस', 'नित्य लीला' आदि कहानियाँ संकलित हुईं। 'ठुमरी' की भूमिका (स्वरलिपि) में रेणु ने उसमें संकलित सभी कथाओं का अंतर्मार्ग एक ही बताया था। उन्होंने अपने को 'ठुमरी' का कथागायक बताते हुए कहा कि जिस प्रकार गीत के अंतर्मार्ग में बीच-बीच में विभिन्न स्वरों के प्रयोग से वैचित्र्य और कारुकार्य सम्पादित होता है... एक स्वर को लेकर, विभिन्न स्वरों से उसकी संगति दिखला-दिखलाकर ही किसी राग के रूप को प्रकाशित किया जाता है। उसी प्रकार इस संग्रह की कथाओं में एक ही विशेष मुहूर्त को विभिन्न परिवेश में रखकर रूपायित किया गया है। तात्पर्य इसका यह प्रतीत होता है कि इन सभी कहानियों की संवेदना की मूल प्रकृति में कोई विशेष अंतर नहीं है, जो अंतर है, वह संवेदना के परिवेश में है।"[1]

रेणु की आरंभिक कहानियों में एक खास तरीके का सपाटपन मिलता है। इनमें से ज्यादातर कहानियाँ इकहरी हैं, उनमें जीवन का वैसा मार्मिक चित्रण तथा तनाव नहीं मिलता जैसा कि रेणु के बाद में प्रकाशित कहानियों में मिलता है। रेणु की कहानियाँ सरल हैं, जो ग्रामीण जीवन के यथार्थ को दर्शाती हैं। "रेणु कहानियाँ लिखते नहीं बुनते हैं; जैसे कबीर चादर बुनते थे, और उसी तर्ज पर अपनी भी कबीर ने चादर बुनने की प्रक्रिया अपने एक पद में बतलायी है— ठोंक-ठोंक के बीनी चदरिया।"[2]

रेणु संवेदनशील थे। इनकी कहानियों के चरित्र मूर्तिमान होकर उभरने लगते हैं। 'रसप्रिया' उनकी ऐसी कहानी है जिसमें पंचकौड़ी मिरदंगिया के बहाने ग्रामीण जीवन में चल रहे रोमांस और उनकी परिणति को सौष्ठव के साथ वह रखते हैं। रेणु उन मनुष्य समूह की स्थिति को देखने की कोशिश कर रहे होते हैं जो अपने समय का इतिहास चुपचाप बैठ कर लिख रहे होते हैं। 'रसप्रिया' कहानी में मोहना की माँ और पंचकौड़ी मिरदंगिया आपको चाहे जितना निरीह दिखें, वे भी अपने समय को अनेकानेक संकेतों से संबोधित कर रहे होते हैं। रेणु ऐसे ही मूक रहे पात्रों के कथावाचक हैं। "मिरदंगिया ने कहा, 'माँ बुला रही है। जाओ!... अब से मैं पदावली नहीं, रसप्रिया नहीं, निरगुन गाऊँगा। देखो, मेरी उँगली शायद सीधी हो रही है। शुद्ध रसप्रिया कौन गा सकता है आजकल? ..."[3] जब मोहना की माँ जंगल के बीच से होकर गुजर रही थी तो निरगुन गाता हुआ मिरदंगिया झरबेरी की झाड़ियों में छिप गया। जब मोहना की माँ ने पूछा, "यहाँ अकेला बावड़ा होकर क्या करता है? कौन बजा रहा था मृदंग रे?" रमपतिया घास का बोझा सिर पर लेकर खड़ी

है। मोहना ने कहा, "पंचकौड़ी मिरदंगिया।" ऐँ वह आया है? आया है वह?" इतना कहते हुए उसकी माँ ने बोझा ज़मीन पर पटकते हुए पूछा। ठइस कहानी में रेणु ने घास के बोझ का इस्तेमाल मेटाफर की तरह किया है"[4]।

इस कहानी में ट्रेजेडी है। यह अद्भुत प्रेम कथा है। ट्रेजेडी हमें आर्थिक, सामाजिक अंतर्संबंध और उसमें कलाकार की नियति पर सोचने के लिए विवश करती है। रेणु की अन्य कई कहानियों जैसे— 'पंचलाइट', 'तीसरी कसम', 'अच्छे लोग' या फिर आखिरी दौर की कहानी 'भित्तिचित्र की मयूरी' में रागात्मकता के विभिन्न रूपों को आप देख सकते हैं।

'लालपान की बेगम' की बिरजू की माँ कितनी छोटी सी इच्छा पालती है। बस अपनी बैलगाड़ी पर बैठकर नाच देखने जाना है। उसका पति आने वाला है, अभी आया नहीं है। बिरजू की माँ इंतज़ार में चिड़चिड़ा रही है। जंगी की पतोहू कटाक्ष करती है, लेकिन जब उसका पति गाड़ी लेकर आ जाता है तो वह उदार हृदय के साथ सब कुछ भूल कर अपनी बैलगाड़ी पर जंगी की पतोहू को बिठाकर नाच दिखाने ले जाती है। बिरजू की माँ अपने दोनों बच्चों— बिरजू और चम्पिया के संग जंगी की पतोहू के साथ गीत गाते हुए नाच देखने पहुँची। उसका हृदय प्रसन्न है, उमंग से भरा हुआ है। "रेणु जी ने 'लालपान की बेगम' में सिर्फ जिन्दगी का एक टुकड़ा ही नहीं पेश किया है बल्कि उसके पीछे इस गहरे यथार्थ की ओर भी इशारा किया है कि उत्सव मनाने के लिए उत्सवधर्मिता का भी एक नैतिक आधार होता है और उस आधार के लिए भी संघर्ष करना पड़ता है। जमींदारों के विरुद्ध संघर्ष कर पहले जमीन हासिल होती है। उस जमीन की फसल से बैल खरीदे जाते हैं। जब बैल हो जाते हैं, फिर उसी बैलगाड़ी से नाच देखने जाया जाता है। जमीन के लिए किया गया संघर्ष ही उन्हें इस काबिल बनाता है कि वे नाच के सौन्दर्य का लुत्फ उठा सकें। स्त्री के संघर्ष की जद्दोजहद तथा सौन्दर्य की चाहत दोनों पहलुओं का प्रतिनिधित्व बिरजू की माँ करती है"[5]।

रेणु की कहानियों में 'पंचलाइट' कहानी उत्साह और उमंग से भरी है। इस कहानी में गैस बत्ती आ गई है लेकिन चलाना नहीं आता किसी को। गैस बत्ती को गज की तरह बाजार से खरीद कर ले आते हैं लेकिन उन्हें अचानक याद आता है कि जलाना तो किसी को नहीं आता। अन्त में वह पात्र मिलता है, जिसको जाति से बाहर कर दिया गया क्योंकि वह किसी लड़की को देखकर गाना गाया करता है। पंचायत ने उसका हुक्का पानी बंद कर दिया है लेकिन अब मामला जाति के टोले के पंचायत के स्वाभिमान का आ गया है क्योंकि गैस बत्ती जलाना तो हर टोले के आदमी को आता है, लेकिन यह किसी से कैसे कहें कि हमारे यहाँ इसे जलाना किसी को नहीं आता। यह टोले तो सारे जातिवादी टोले हैं। जातिवादी तो हमारे समाज में व्याप्त है। "रेणु की पंचलाइट में राजनीतिक-प्रशासनिक स्तर पर पंचायती राज व्यवस्था शुरु होने के पहले की गोत्र या जाति आधारित पंचायत या पंचायतों का जिक्र है। भारत में खाप पंचायतों का इतिहास वैसे भी काफी पुराना है। गोत्र और जाति की जटिल संरचना वाले देश के ग्रामीण सामाजिक जीवन में विवाह आदि जातिगत मसलों को लेकर इन पंचायतों की अहम भूमिका रही है।"[6]

रेणु की प्रारंभिक कहानियों में सबसे विलक्षण कहानी है— 'प्राणों में घुले हुए रंग'। इस कहानी में एक डॉक्टर का आत्म-चरित्र है। यही डॉक्टर आगे चलकर प्रशान्त के रूप में 'मैला आँचल' उपन्यास में अवतरित होता है। रेणु अपने जीवन में डॉक्टरी पेशा से अधिक प्रभावित हुए थे। उसका जीवन चरित्र उन्हें बहुत आकर्षित करता था। इस कहानी में भी एक डॉक्टर के जीवन में अनेक तरह की परिस्थितियाँ आती हैं और हर परिस्थितियों का अपना एक अलग रंग है। और वे सभी रंग उसके प्राणों में घुलते रहते हैं। सभी रंगों का अपना-अपना अर्थ है। यह डॉक्टर भी समाज को स्वस्थ, सुखी और सुन्दर देखना चाहता है। वह गाँव में रहकर औषधालय चलाता है। और मलेरिया और हैजे के समय में मरते हुए प्राणियों में से कुछ व्यक्तियों को भी मौत के मुँह से बचाकर अपनी चिकित्सक की पढ़ाई को सार्थक समझता है।

रेणु की प्रारंभिक कहानियों में उनका आंचलिक बोध स्पष्ट परिलक्षित होता है और भारतीय जनमानस को जीवंत करता है। उनकी कहानियों गाँव के बदलते समाजशास्त्र को भी प्रस्तुत करती हैं और भारतीय जीवन के बदलते

परिदृश्य का अंकन भी करती हैं। निस्संदेह रेणु की प्रारंभिक कहानियाँ एक समर्थ और कालजयी कथाकार के ऐतिहासिक प्रस्थान का प्रमाण देती हैं।

संदर्भ-सूची :

1. हिंदी कहानी का इतिहास, गोपाल राय, खण्ड-2, राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पहला संस्करण-2011, पृष्ठ सं0 – 60.
2. मुक्तांचल त्रैमासिक, रेणु शतवर्ष विशेषांक, वर्ष-8, अंक-29, जनवरी-मार्च 2021, डॉ0 मीरा सिन्हा, पृष्ठ सं0 – 112.
3. रेणु रचनावली, प्रथम खण्ड, भारत यायावर, राजकमल प्रकाशन, पृष्ठ सं0 – 135.
4. संवेद, मार्च 2021, फणीश्वरनाथ रेणु शताब्दी स्मरण, 'किशन कालजयी', अंक-3, पृष्ठ सं0 – 487.
5. वही, पृष्ठ सं0 – 315, 316.
6. मुक्तांचल त्रैमासिक, रेणु शतवर्ष विशेषांक, वर्ष-8, अंक-29, जनवरी-मार्च 2021, डॉ0 मीरा सिन्हा, पृष्ठ सं0 – 129.
7. सहायक ग्रंथ : रेणु रचनावली, प्रथम खण्ड, भारत यायावर, राजकमल प्रकाशन

•